B.A. History Hon's, Part-II

Paper: IV, Unit: I ; Date: 14.8.2020 Lecture No- 19

Lession: जापान का दरवाजा खोला जाना

प्राचीनकाल में चीन और कोरिया के साथ जापान का नजदीकी संबंध स्थापित हुआ। प्रारंभ में चीनी विद्वानों और कलाकारों की सहायता से ही जापानी साहित्य एवं कलाओं का प्रादुर्भाव हुआ परन्तु बाद में स्वयं अपने परिश्रम के बल पर जापानियों ने काफी उन्नति कर लिया। यूरोप के साथ उनका प्रथम संसर्ग सोलहवीं शताब्दी में हुआ। 1542 ई० में पुर्तगाली यहाँ गए और जापानियों से व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित किए। विदेशियों व्यापारियों के दुर्व्यवहार एवं अत्याचार से तंग आकर जापान के शासकों ने विदेशियों के आना-जाना बिल्कुल रोक दिया। 1624 से 1638 ई. के बीच सभी विदेशी व्यापारी तथा धर्म प्रचारक वहाँ से बाहर निकाल दिये गए और अगर इन देश में ईसाई धर्म का अनुयायी दिखाई दिया तो उसका सिर काट लिया जाएगा। करीब दो सौ वर्षों तक जापान में नीति लागू रही। फलतः आर्थिक दृष्टिकोण से जापान की बड़ी प्रगति हुई। येदो, क्योतो, ओसाका, नागासाकी आदि बड़े-बड़े शहरों का उदय एवं विकास हुआ। 1700 ई. के आसपास येदो की आबादी दस लाख तक पहुँच गई। कृषि क्षेत्र में काफी विकास हुआ। इसी दौरान में जब जापान उन्नति करता जा रहा था, उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य पश्चिमी देशों ने उसका द्वार थपथपाया और अंत में उसके एकांत जीवन को बर्बाद करके विश्व के रंगमंच पर ला दिया।

यूरोपीयों का जापान में आगमन: 1792 ई० में पहला और 1804 ई० में दूसरा रूसी प्रतिनिधि दल नागासाकी पहुँचा और जापान से व्यापार के बारे में वार्तालाप किया। किन्तु जापान ने इन्कार कर दिया। फलतः जापान और रूस के बीच तनाव बढ़ा, परन्तु रूस यूरोप में नेपोलियन के युद्ध में फँसा था। अतएव जापान की ओर विशेष ध्यान नहीं दे सका। इंगलैंड की ओर से 1793 ई० में कार्टन को जापान भेजा गया, किन्तु जापान में प्रवेश करने की आज्ञा उसे जापान से नहीं मिली। दोनों के तनाव बढ़ना शुरू हो गया और 1819 ई० में अंग्रेजों ने सिंगापुर पर अधिकार कर लिया। जापानी अधिकारियों ने आदेश दिया कि यदि कोई विदेशी जहाज जापान में घुसा तो उसे गोली मार दी जाएगी। किन्तु 1842 ई० में इस कानून को कुछ नरम किया गया, क्योंकि अफीम युद्ध में चीन पराजित हो गया था। अतः जापान भी डर गया था। शक्तिशाली अमेरिका की रुचि प्रशांत महासागर में बढ़ने लगी और कई जहाज जापान के किनारे पर ध्वस्त हो जाते थे। 1846 ई० में इस सिलसिले में ह्वेल मछली का शिकार करने के उद्देश्य से आया जहाज कठिनाई में फँस गया और जापान के एक बंदरगाह में शरण लेनी चाही। लेकिन जापान ने अनुमति नहीं दी। 20 जुलाई 1846 ई० को अमेरिकी नौ सेना का अधिकारी कोमोडोर जेम्स बिडिल दो जहाज लेकर एक जापानी बंदरगाह पर उतरा और व्यापारिक सम्बंध के लिए प्रार्थना की लेकिन जापानी सरकार को यह मान्य नहीं हुआ। 1849 ई० में कोमोडोर जेम्स ग्लिन पन्द्रह अमेरिकी नाविकों को छुड़ाने के लिए नागासाकी आया किन्तु व्यापार के सम्बंध में बात नहीं हुई। 1853 ई० में अमेरिकी नौ सेना के एक दूसरे अधिकारी कोमोडोर मैथ्यू कलब्रेथ पेरी को राष्ट्रपति फिलमोर ने जापान भेजा। जापान के बंदरगाहों पर अमेरिकी युद्धपोतों को ठहरने की सुविधा दें। उसने नमूने के तौर पर पश्चिमी तार और रेल व्यवस्था के दो नमूने भेंट किए। पेरी यह कहकर वापस चला गया कि जापानियों ने अपना व्यवहार नहीं बदला तो अगले वर्ष वह शक्तिशाली बेड़ों के साथ पुनः जापान आएगा। फरवरी, 1854 में कोमोडोर पेरी 1794-1858 तीन भाप के जहाज और पाँच यान लेकर जापान आ पहुँचा। उसके आने के जल्दी की; क्योंकि रूस के जार निकोलस प्रथम ने एडमिरल पुत्यातीन के नेतृत्व में

नागासाकी में चार जहाजों का एक बेड़ा भेज दिया था। उसका उद्देश्य [illegible]
और ब्रिटिश प्रभाव क्षेत्र के विस्तार को रोकना था। पेरी ने शोगुन को भारी दुविधा में
डाल दिया। उसने तुरंत डैम्यो की सभा बुलाई उसमें कई विचार प्रकट हुए। उसका कहना था
कि पहले विदेशी हमें शिक्षा देंगे, औजार, मशीन और विलासमय साधन देंगे, फिर हर संभव
उपाय द्वारा जापानियों को धोखा देंगे। चूँकि उनका उद्देश्य व्यापार है, इसलिए वे धीरे-धीरे
देश का धन चूसकर गरीब कर देंगे। डैम्यो की सभा में दूसरे पक्ष का कहना था कि जापान को
पश्चिमी देशों के साथ संधियाँ करनी चाहिए, उनकी विद्याओं और कलाओं को सीखकर अपने
देश को शक्तिशाली बनाना चाहिए ताकि जापान के लोग पश्चिमी देशों का मुकाबला कर सकें।
दूसरे पक्ष की बात स्वीकारी गई और अमेरिका के साथ 31 मार्च 1854 को संधि हो गई। उसके
अनुसार शीमोदा और हाकोदाते में अमेरिकी जहाजों का कोयला आदि सामान लेने और कुछ
व्यापार करने की अनुमति मिल गई। यह भी तय हुआ कि अन्य देशों को जापान में जो भी
अतिरिक्त सुविधाएँ दी जाएँगी वे अमेरिका को स्वतः प्राप्त होंगी। इस तरह विदेशियों के
लिए जापान का द्वार खुल गया।

जापान का द्वार खुलने का कार्य जारी: अमेरिका के प्रयास से जापान का द्वार विदेशियों के
लिए खुल गया। अक्टूबर 1854 में नागासाकी में एक ब्रिटिश अधिकारी जेम्स स्टर्लिंग ने एक
संधि की। फरवरी 1855 में शीमोदा में रूस के साथ संधि हो गई। डचों को अन्त में नागासाकी की
सीमाओं से मुक्ति मिल गई क्योंकि जनवरी 1856 में उनके साथ जापान की एक संधि हो गई।
कानागावा की संधि के अनुसार 1856 ई० में टाउनसेंड हैरिस अमेरिकी प्रतिनिधि की हैसियत से
जापान पहुँचा। इसी बीच उसे खबर मिली कि यूरोप की शक्तियों ने चीन को हराकर उस पर
मनमाफिक संधि का भार डाल दिया और 29 जुलाई 1858 को जापान और अमेरिका के बीच एक
दूसरी संधि हुई जिसके अनुसार • शीमोदा और हाकोदाते, कानागावा और नागासाकी को तुरंत व्यापार
के लिए खोल दिया। निगाता और ह्योगो को 1860 से 1863 ई० तक धीरे-धीरे खोलने की व्यवस्था की
गई। ∴ आयात-निर्यात करों की दरें मुनासिब तय की गई। ∴ जापान में अमेरिकियों को उनके
अपने कानून के अधीन रहने का अधिकार दिया गया। ∴ अमेरिका ने जापान को युद्धपोत
जहाज और तकनीकी विशेषज्ञ देने का वादा किया। ∴ दोनों देशों में प्रतिनिधि और दूत
रखने का निर्णय लिया गया। ∴ अमेरिका के लोगों को जापान में धार्मिक स्वतंत्रता प्रदान की गई।
∴ 4 जुलाई 1872 की संधि को दोहराने की घोषणा की गई।

परिणाम इन संधियों के कारण एक ही विदेशी व्यापारी भारी संख्या में कानागावा के निकट योकोहामा
में बसने लगे। धीरे-धीरे यह स्थान प्रमुख व्यापारी बंदरगाह बन गया। चीन की तरह जापान
में भी विदेशियों को न्याय-शासन और आयात-निर्यात कर से मुक्ति मिल गई। 1867 ई०
तक जापानी सम्राट मिकाडो की शक्ति बहुत ज्यादा थी। उस समय जापान छोटे-छोटे
कई प्रान्तों में बँटा था। सबके बड़ा सरदार शोगुन कहलाता था। वह सम्राट का प्रतिनिधि
समझा जाता था। जब शोगुन ने कमोडोर पेरी से संधि की और विदेशियों को जापान में
आने-जाने की अनुमति दी तब से बाहर कहा गया और उसकी शक्ति दूर करने के
बड़े सरदार लग गए। शोगुन से सरदारों को पहले से ही ईर्ष्या थी। 1867 ई० में शोगुन
को पराजित कर दिया गया और शासन के समस्त अधिकार जापान के सम्राट को प्राप्त हो गए।
जापान ने समझ लिया कि अपने-आपको यूरोपीय शक्ति का शिकार
बनने से रोकने के लिए उन्हीं की तरह शक्ति सम्पन्न, सुशिक्षित एवं वाणिज्य व्यवसाय
में कुशल बनना पड़ेगा। विदेशियों की छेड़-छाड़ तथा आत्म रक्षा के कारण जापान में
राष्ट्रीयता का भाव पहले ही फैल चुका था। अतः जापान में क्रान्ति के पथ पर
बढ़ने में किसी प्रकार की कठिनाई नहीं हुई। इस प्रकार जापान समृद्ध शक्तिशाली देश
के रूप में कायम रहा।

□ डा० शंकर जय किशन चौधरी
अतिथि शिक्षक, इतिहास विभाग
डी० बी० कॉलेज, जयनगर